LL.B.3 year 3rd sem &LL.B.5year 5th sem
विधिशास्त्र,

Unit 4 Sociological school

Realist School of Jurisprudence.

समाजशात्रीय विचारधारा **(Sociological school)**

समाजशास्त्री विचारधारा का उदय विधि के क्षेत्र में वर्तमान युग की सबसे बड़ी उपलब्धि है यद्यपि इस विचारधारा के विधिशास्त्रीयो में भिन्नता होती हुई भी सभी ने यह स्वीकार किया है कि इस पद्धति में सामाजिक पहलू पर सबसे अधिक महत्व दिया गया है न कि विधि की अमूर्त सिद्धांत पर समाजशास्त्री विचारधारा के विधिशास्त्रीयो ने यह स्पष्ट किया कि विधि को सामाजिक आवश्यकताओं से अलग नहीं रखा जा सकता अतः उन्होंने विधि के प्रति व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाया समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण अपनाने वाले विधिशास्त्री विधि के उद्देश्य तथा नैतिक पहलू पर अधिक ध्यान नहीं देते I उनके अनुसार विधिका अध्ययन ऐसे पद्धति से किया जाना चाहिए जिससे सामुदायिक जीवन के अंतर्गत संपर्क में आने वाले व्यक्ति की पारस्परिक संबंधों एवं संव्यवहारो को विनियमित किया जा सके यही कारण है कि इस पद्धति को क्रियाशील विधि माना गया है अमेरिकन विधिशास्त्र डीन रास्को पाउंड ने इसे सामाजिक अभियांत्रिकी **(Sociol Engineering)**कहा है**I**

समाजशास्त्री विचारधारा के प्रमुख समर्थक **---- montesquieu** विधिशास्त्र की समाजशास्त्री विचारधारा का सूत्रपात करने का श्रेय फ्रांसीसी विचारक मान्टेसकू को जाता है उन्होंने विधि को प्रभावित करने वाली विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों का अध्ययन करने के पश्चात यह तर्क प्रस्तुत किया कि किसी भी देश की राष्ट्रीय विधि उस देश की सामाजिक परिस्थितियों मूल्यों एवं मान्यताओं पर आधारित होती है उनका मानना था कि विभिन्न देशों की सामाजिक भौगोलिक एवं भौतिक परिस्थितियां भिन्न भिन्न होने के कारण सभी जगह एक समान विधि लागू नहीं की जा सकती है**I**

रूडोल्फ वान इहरिंग को वर्तमान समाजशास्त्री विधिशास्त्र का जनक माना जाता है उनके अनुसार विधि का उद्देश्य व्यक्तिगत हितों को एकरूपता देते हुए सामाजिक हितों को सुरक्षा प्रदान करना है इहरिंग का सामाजिक हित उन्हें उपयोगितावाद का प्रेणता बेंथम से संबंध करता है जबकि उनका राज्य की शक्ति का सिद्धांत उन्हें आस्टिन के निकट लाता है अतः सामाजिक उपयोगिता के माध्यमसे इहरिंगने विधिवेताओ का ध्यान समाज और विधि के बीच समन्वय स्थापित किए जाने की आवश्यकता की ओर आकृष्ट किया है

इहरिंग ने विधि को सामाजिक हितों को साध्य करने का साधन माना**I** अतः उन्होंने विधि को एक साधन मात्र निरूपित किया जिसका प्रयोग राज्य द्वारा लोगों के हितों के टकराव के निवारण के लिए किया जाता है इस प्रकार

विधि में राज्य की सुनियोजित प्रपीड़न शक्ति परोक्षता अंतरविस्ट होती है इहरिंग का स्पष्ट मत था कि सामाजिक नियंत्रण के लिए विधि एकमात्र साधन न होकर जलवायु, भौगोलिक स्थिति, व्यक्ति की मनोदशा आदि जैसी अनेक अन्य कारक भी सामाजिक नियंत्रण को प्रभावित करते हैं। विधिशास्त्री विधिशास्त्रीयो ने इहरिंग की विधि संबंधी विचारधारा का दो मुख्य आधारों पर खंडन किया -पहला उनका यह कथन की विधि का कार्य समाज के व्यक्तियों की विभिन्न हितों में टकराव का निवारण करना है ,दूसरा इहरिंग का सामाजिक हित का सिद्धांत वस्तुतः मानव इच्छाओं को संरक्षित करता है ना कि उनके हितों को।

लिओन डयूगिट --- फ्रांस के विधिशास्त्री डयूगिट संवैधानिक विधि के प्राध्यापक थे उन्होंने विश्लेषणात्मक विधिशास्त्र की संप्रभुता संबंधी धारणा तथा विधि के आदेशात्मक स्वरूप का खंडन किया है उन्होंने अपनी कृति इन द मॉडर्न स्टेट में लिखा है कि संप्रभुता की धारणा के स्थान पर जनसेवा के विचार को महत्व दिया जाना चाहिए वर्तमान राज्य के सिद्धांत का मूल आधार जन सेवा है।

डयूगिट का सामाजिक समेकता का सिद्धांत --

डयूगिट के अनुसार समाज का सर्वोच्च लक्ष्य मनुष्य का एक दूसरे के सहयोग से सुखमय जीवन की ओर अग्रसर होना है वर्तमान समय में मनुष्य के एकल जीवन की परिकल्पना व्यर्थ है।समाज में मनुष्य की परस्पर निर्भरता को डयूगिट ने सामाजिक समेकता कहा है डयूगिट ने राज्य को मानव संगठन का एक प्रकार मात्र माना है राज्य का अस्तित्व तभी तक है जब तक वह सामाजिक समेकता को बढ़ाता है यदि राज्य की गतिविधियां सामाजिक समेकता के प्रतिकूल हो तो प्रजा का कर्तव्य हो जाता है कि वह ऐसे राज्य के विरुद्ध विद्रोह करें।इस प्रकार डयूगिट न तो राज्य के व्यक्तित्व में विश्वास करते हैं और न की शक्ति के विकेंद्रीकरण में डयूगिट मानव के वैक्तिक अधिकारों को और अस्वीकार करते हैं अतः उनके अनुसार मनुष्य केवल एक ही अधिकार धारण करता है वह अधिकार है अपने कर्तव्य का निरंतर पालन करते रहना।

डयूगिट के सिद्धांत की समीक्षा --- 1•डयूगिट ने अपने सामाजिक समेकता के सिद्धांत में राज्य को आवश्यक मानव संगठन के रूप में स्वीकार नहीं किया है। उनके अनुसार जीवन की जटिलताओं के साथ मानव समाज विकेंद्रीकरण की ओर अग्रसर होता है और राज्य के अस्तित्व की आवश्यकता कम होती जाती है

2.राज्य और विधि का उद्देश्य सामाजिक समेकता को बढ़ावा देना है।उचित होते हुए भी व्यावहारिक दृष्टि प्रभावित प्रतीत नहीं होता है क्योंकि राज्य या मनुष्य का कार्य सामाजिक समेकता को बढ़ावा देना या उसमें बाधा पहुंचाएगी यह व्यक्ति विशेष की व्यक्तिगत विचारों पर निर्भर करेगा।

3• किसी विधि को विधिक मान्यता तभी प्राप्त होती है जब वह सामाजिक समेकता की ओर अग्रसर हो उनका यह भी निश्चित मत था कि ऐसे सभी कानून जिनका सामाजिक समेकता में कोई योगदान नहीं है विधि की श्रेणी में नहीं रखे जा सकते।

4. डयूगिट ने लोग विधि व प्राइवेट विधि के भेदों को   अस्वीकार किया और कहा कि इससे राज्य को अनावश्यक बढ़ावा   देकर समाज से श्रेष्ठ मानना है जो उचित नहीं है I5• डयूगिट ने मानव के व्यक्तिगत अधिकारों के अस्तित्व को अस्वीकार किया है वे   केवल मनुष्य के एकमात्र अधिकार को मानते थे जो यह है कि वह सदैव अपने कर्तव्यों का पालन करता रहे I

आलोचना ----

डयूगिट के सामाजिक समेकता   के सिद्धांत की आलोचना अनेक आलोचकों ने इस प्रकार की है कि यह व्यावहारिक प्रतीत नहीं होता है आलोचकों का मानना है कि डयूगिट ने अपने विधि संबंधी सिद्धांत में प्राकृतिक विधि को दरवाजे से निकाल कर बाहर किया और खिड़की से उसे पुनः प्रवेश करने दिया।

डीन रास्को पाउण्ड --- अमेरिकी विधिशास्त्री डीन रास्को पाउण्ड   ने इहरिंगकी विधि शास्त्री दीन रात को पाउंड में यह रिंग के विचारों से प्रेरणा लेते हुए यह रिंग के विचारों से प्रेरणा लेते हुए समाजशास्त्री विधिशास्त्र को क्रियात्मक स्वरूप दिया है पाउंड ने अपने विधिक दर्शन को हितों पर आधारित करते हुए कथन किया है कि हितों को विद की प्रमुख विषय वस्तु महाराणा उचित होगा उन्होंने कहा है कि विधि का कार्य है कि वह मनुष्यों के हितों की रक्षा करें और उनकी इच्छाओं आवश्यकताओं और मांगों की पूर्ति करें अतः विधि एक ऐसा ज्ञान और अनुभव है जिसके माध्यम से सामाजिक नियंत्रण स्थापित किया जा सकता है

दीन राजगोपालन का सामाजिक यांत्रिकी का सिद्धांत पाउंड के विचार से विद का प्रमुख कार्य सभ्यता को आगे विकसित करना है इसका तात्पर्य है कि मानव सृष्टि से निरंतर संघर्ष करते हुए अपनी शक्तियों का कालांतर विकास करता है इस प्रकार पाउंड विधि को एक साधन मात्र मानते थे विद का प्रथम कर्तव्य है कि वे समाज के उन तत्वों की खोज करें जो सभ्यता को विकसित करते हैं दूसरा कार्य है कि इन तत्वों के निरीक्षण और परीक्षण द्वारा मानवीय संभव हारों के उन सिद्धांतों की खोज करें जो सभ्यता को बनाए रखने में सहायक हो सकते हैं पाउंड ने समस्त मानव हितों को तीन श्रेणियों में व्यक्त करते हुए उन्हें विधि द्वारा संरक्षण दिए जाने की आवश्यकता प्रतिपादित की यह निम्नलिखित है पहला व्यक्तिगत हित इसमें व्यक्ति संबंधित घरेलू मामलों से संबंधित सम्मान एवं प्रतिष्ठा एकांता इच्छा की स्वतंत्रता आदि शामिल है दूसरा लोकहित इसमें राज्यों से परीक्षण के ही तथा सामाजिक हितों के संरक्षण के रूप में राज्य के हित समावेश है तीसरा सामाजिक हित इस में शांति व्यवस्था तथा सामान्य सुरक्षा के बनाए रखने के सामाजिक साधनों की रक्षा करने वाले मानवी व्यक्तियों के विकास से संबंधित हितों का समावेश है राज को पाउंड के अनुसार हितों के परस्पर टकराव को कम करने के लिए विवादों के हल का ऐसा मार्ग प्रस्तुत किया जाना चाहिए ताकि उसमें सम्मिलित विभिन्न हितों को कम से कम हानि पहुंचे इसलिए डीन रास्को पाउण्ड विधिशास्त्र को सामाजिक विज्ञान कहने की बजाय सामाजिक तकनीकी कहना अधिक उपयुक्त समझा। उन्होंने विधि को सामाजिक यांत्रिकी निरूपित करते हुए राज्य की संप्रभुता, अधिकार ,कर्तव्य, व्यक्तित्व आदि सैद्धांतिक परिकल्पना पर विचार

करना आवश्यक समझा तथा सामाजिक आवश्यकताओं के अनुरूप नयी तकनीक के विकासकी ओर ध्यान केंद्रित किए जाने की आवश्यकता पर बल दिया।

सामाजिक यांत्रिकी सिद्धांत की आलोचना ••••जहां एक ओर विधिशास्त्र संबंधी अपने सामाजिक यांत्रिकी सिद्धांत के द्वारा खलबली मचा दी, वहीं दूसरी ओर कुछ लोगों ने इसकी आलोचना कि। आलोचकों का तर्क था कि पाउंड ने अपने न्यायिक आधार तत्वों में घर्षण अवशिष्ठ तथा सामाजिक यात्रिकी की जैसे तकनीकी शब्दों का प्रयोग करके समाज को एक कारखाने के समान माना जो उचित नहीं है अतः सामाजिक यांत्रिकी का सिद्धांत पूर्णतः कल्पनाओं पर आधारित है न की वास्तविक सत्यता पर पाउंड के हितों का सिद्धांत ऐसे बहुत समाजों के लिए विशेष महत्वपूर्ण नहीं रखता जिनमें जाति धर्म भाषा एवं वंश आदि पर आधारित अल्पसंख्यकों का बाहुल्य है।जैसा कि अमेरिका ,भारत, इंग्लैंड आदि देशों में है।

भारतीय परिप्रेक्ष्य(Indian Perspective)--

भारत में विधि के प्रति समाजशास्त्री एवं क्रियात्मक दृष्टिकोण अपनाए जाने के प्रमाण अनेक विधियों में अस्पष्ट दिखाई देते हैं। स्वतंत्रता के पश्चात भारत की विधि व्यवस्था को सामाजिक आवश्यकताओं के अनुरूप बनाने के लिए निरंतर प्रयास किए गए व आज भी किए जा रहे हैं इसमें कल्याणकारी राज्य की परिकल्पना को सरकार साकार रूप देने के प्रयत्न स्वरूप अनेक सामाजिक आर्थिक तथा मानवीय कानून लागू किए गए जो गरीबी, बेरोजगारी और शिक्षा भेदभाव, छुआछूत आदि को समाप्त कर समाजवाद को स्थापित कर सकें संविधान के भाग **4** मे दिए गए नीति निर्देशक सिद्धांत इस दिशा में मार्गदर्शक सिद्ध हुए हैं बैंक राष्ट्रीयकरण प्रीवी पर्स की समाप्ति शहरी संपत्ति की सीमा पर निबंधन आदि आर्थिक समानता की ओर इंगित करते हैं न्यायपालिका की स्वतंत्रता प्रजातंत्र की रक्षा में विशेष सहायक सिद्ध हुई वर्तमान में गरीबों के लिए मुफ्त कानूनी सहायता तथा बंधुआ मजदूरी को समाप्त करने संबंधी कानून भी इस बात का परिचायक है कि भारतीय विधि के अंतर्गत सामाजिक आवश्यकताओं को सर्वाधिक महत्व दिया जा रहा है ताकि उसकी उपयोगिता बढ़ सके।

विधि का यथार्थवादी सिद्धांत **(Realist Theory of Law)**

समाजशास्त्री विधिशास्त्र की प्रगति के साथ साथ एक वामपंथी शाखा का प्रादुर्भाव हुआ जिसे यथार्थवाद के नाम से जाना जाता है।यथार्थवादी शाखा को एक स्वतंत्र विचार पद्धति के रूप में स्वीकार करना उचित नहीं अमेरिका के विख्यात न्यायधीश जेरोम फ्रेंक ने यह स्वीकार किया की विधि क्षेत्र में यथार्थवादी शाखा के नाम की कोई स्वतंत्र विधि पद्धति अस्तित्व में नहीं है।

अमेरिका में यथार्थवादी विधिशात्रियोने विश्लेषणात्मक प्रमाणवादऔर समाजशास्त्री शाखा के आधारभूत सिद्धांतों को मिलाकर विधि के प्रति एक नई विचारधारा अपनाने का प्रयास किया जिसे अमेरिकी यथार्थवाद के नाम से विकसित किया गया इस यथार्थ वाद पद्धति में विश्लेषणात्मक प्रमाण वादी पद्धत कि इस धारणा को अपनाया गया की विधि के

यथार्थ रूप पर ही विचार किया जाना चाहिए न की उसके अपेक्षित स्वरूप पर यथार्थवादी केवल विधि को ही अपने अध्ययन का विषय मानते हैं समाज को नहीं ।विश्लेषणात्मक विधिशास्त्रियों ने न्यायाधीशों की स्वच्छंदता को कभी स्वीकार नहीं किया है।इसलिए जूलियस स्टोर ने कहा है कि यथार्थवाद आंदोलन समाजशास्त्री पद्धति के प्रति भुलावा मात्र है ।इससे समाजशास्त्री पद्धत का प्रतिबिंब या आमुख मानना ही उचित है।

अमेरिकी यथार्थवाद के प्रमुख प्रवर्तक--

जान चेपमैन ग्रे-- विधिशास्त्र में जान ग्रे का महत्व विश्लेषणात्मक शाखा के समर्थकों के रूप में है ।उन्होंने विधि विज्ञान में आदर्शों को कोई स्थान नहीं दिया क्योंकि उन्होंने अधिनियमित विधायन को विधि का केंद्र बिंदु नहीं माना ।अधिनियमित विधान को उन्होंने विधि के विभिन्न स्रोतों में से केवल एक स्रोत मात्र माना है। विधिशास्त्र में ग्रे का मुख्य योगदान यह है कि उन्होंने अधिनियमित विधि की बजाय न्यायिक निर्णयों को अधिक महत्व दिए जाने की आवश्यकता प्रतिपादित की ।

ग्रे के अनुसार विधि न्यायाधीशों द्वारा घोषित की जाती है तथा इसमें उन नियमों का समावेश रहता है जो पक्षकारों के अधिकारों तथा कर्तव्यों के निर्णयन हेतु न्यायालयों द्वारा निर्धारित किए जाते हैं ।सामाजिक व्यवस्था में कानूनों की निर्मिती न्यायधीश की अहम भूमिका रहती है क्योंकि न्यायधीश केवल विधि की खोज ही नहीं करते अपितु विधि का सृजन(निर्माण)भी करते हैं।

न्यायाधीश होम्स-- अमेरिकन यथार्थवादी आंदोलन का प्रारंभ अमेरिका के सुविख्यात न्यायधीश होम्स की एक निबंध से माना जाता है जो **1897**में प्रकाशित किया गया था इसमें उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि यथार्थवादी विधिक विचारधारा का केंद्र बिंदु न्यायधीश है ।यथार्थवादी विचारधारा की मूल धारणा यह है कि विधि से संबंधित समस्याओं का हल विधि के अधिनियमित विधियों नियमों में नहीं मिल सकता बल्कि उन नियमों के क्रियान्वयन में मिलता है ।जस्टिस होम्स विधि की परिवर्तन शीलता का समर्थन करते हैं उनका कहना है कि राष्ट्र की बदलती हुई परिस्थितियों के साथ-साथ वहां की विधि में परिवर्तन होना अवश्यंभावी होता है ताकि वह परिस्थितियों के अनुकूल बनाई जा सके विधि की व्यवहारिकता को महत्व देते हुए न्यायमूर्ति होम्स कहते हैं की विधि गणित की पुस्तक में लिखित पूर्व मान्यताओं के समान अटल नहीं होती।अतः उसमें तर्क की बजाय आचरण तथा अनुभव को ही अधिक महत्व दिया जाना चाहिए जस्टिस होम्स ने विधि की व्याख्या न्यायाधीश के समक्ष उपस्थित एवं दुराचारी व्यक्ति के   दृष्टिकोण से करते हुए अभी कथन किया कि एक अपराधी या दुराचारी को इस बात से कोई मतलब नहीं होता कि उसके प्रति लागू होने वाली विधि किन सिद्धांतों पर आधारित है बल्कि उसका ध्यान केवल इस ओर केंद्रित होता है कि न्यायधीश उसके प्रकरण में किस विधि का अनुसरण करते हुए निर्णय देगा तथा ऐसा निर्णय उसके पक्ष में होगा या उसके विरुद्ध।

जेरोम फ्रेंक-- अमेरिका के विख्यात न्यायधीश जेरोम फ्रेंक भी विधि के यथार्थवादी सिद्धांत के प्रबल समर्थक थे फ्रैंक के अनुसार यथार्थ वादियों की प्रथम श्रेणी में उन विधिशास्त्रियों का समावेश है जिनकी धारणा यह है कि विधिक

नियम विधि में किसी प्रकार की एकरूपता नहीं लाते ।इस श्रेणी के यथार्थवादी मनोवैज्ञानिक समाजशास्त्र अर्थशास्त्र राजनीति शास्त्र राजनीति विज्ञान आदि के नियमों की एकरूपता को विधि के प्रति भी लागू किए जाने पर जोर देते हैं। वे विधिशास्त्रीय जो विधिक नियमों की एकरूपता पर विचार करना व्यर्थ समझते हैं उनके विचार से विधिक नियमों में एकरूपता का अभाव इतना प्रत्यक्ष तथा स्पष्ट है कि उस पर विचार करने का प्रश्न ही नहीं उठता।

जेरोम फ्रेंक की यथार्थवादी विचार पद्धति की मौलिकता यह है कि उन्होंने वास्तविक विधि और संभावित विधि में अंतर स्पष्ट किया। वास्तविक विधि वह है जो समान परिस्थितियों में भूतकाल में किसी न्यायिक निर्णय में दी गई हो। संभावित विधि को परिभाषित करते हुए कहते हैं कि ऐसी विधिहै जो समान परिस्थितियों में भविष्य काल में किसी न्यायिक निर्णय में दी जा सकती हो फ्रेंक के अनुसार संभावित विधि वास्तव में विधि नहीं होती है।

जान राल्स -- अमेरिकन यथार्थवाद को व्यवहारिक रूप देने में जॉन रॉल्स का महत्वपूर्ण योगदान है ।रॉल्स के अनुसार एक सुव्यवस्थित समाज का मूल लक्षण यह है कि उसके व्यक्ति न्याय और औचित्य के प्रति आश्वस्त हो। वे न्याय और औचित्य को केवल कोरी कल्पना नहीं मानते अपितु ये राजनीतिक विचारधारा के प्रमुख तत्व है जो सभी सामाजिक संस्थाओं के प्रति समान रूप से लागू होते हैं।

रॉल्स के समता एवं न्याय के सिद्धांत को अमेरिका के अल्पसंख्यक समुदायों के हितों के संरक्षण के लिए उन्हें प्राथमिकता दिए जाने को न्यायोचित ठहराया गया ।अतः समाज में व्याप्त सामाजिक तथा आर्थिक असमानताओं को इस प्रकार सुनियोजित किया जाना चाहिए ताकि वे प्रत्येक के लिए हितकारी हो। रॉल्स का समता संबंधी सिद्धांत इस वास्तविकता पर आधारित है की विभिन्न वर्गों के लोग समानार्थिक तथा सामाजिक परिस्थितियो, परिवेश में जन्म नहीं लेते अतः उनकी स्थिति में विषमता होना स्वभाविक है जिसे समानता एवं न्याय के सिद्धांत द्वारा दूर किया जाना चाहिए ।भारतीय परिपेक्ष में यथार्थवाद---

स्वतंत्रता के पूर्व भारतीय न्यायालय तथा न्यायाधीशों को भारतीय समाज की वास्तविक समस्याओं एवं आवश्यकताओं से कोई सरोकार नहीं था स्वतंत्रता के पश्चात बदलते हुए सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक परिवेश में विधि चिंतन के क्षेत्र में स्वभाविक प्रवर्तन हुए संविधान निर्माताओं ने संविधान में कल्याणकारी राज्य की कल्पना को साकार करने की अनेक उपबंध की भारत में एक नए प्रगतिवादी विधिशास्त्र का सूत्रपात हुआ सारांश में यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय विधिशास्त्र में आमूल परिवर्तन हुए तथा विधि की रूढिगत मान्यताओं से हटकर जीवन की वास्तविकता पर आधारित सामाजिक एवं यथार्थवादी दृष्टिकोण का सूत्रपात हुआ ।उत्तम न्यायालय के न्यायमूर्ति रामास्वामी ने कृष्णा स्वामी वनाम भारत संघ के बाद में अभिकथन किया कि न्यायाधीशों द्वारा संविधान के उपबंधों का निर्वचन करते समय यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए ,ताकि विधि के माध्यम से समाज में व्याप्त बुराइयों तथा सामयिक   सामाजिक समस्याओं का निदान हो सके।